

## Endgame

### *tripartite agreement provides a honourable exit to the cadres of a much weakened ULFA*

#### Editorial



The signing of a tripartite agreement, in New Delhi, between the pro-talks faction of the United Liberation Front of Asom, the Union government and the Assam State government marks the end of a process that began in 2009. Nearly 15 years ago, the “chairman” of ULFA, Arabinda Rajkhowa, who went on to become the face of the pro-talks faction, was “arrested”, even as other key leaders of the insurgent outfit surrendered. By 2011, following a unilateral ceasefire by the group, the ULFA’s pro-talks faction had already signed a “suspension of operations” agreement, with several cadres staying put at special camps called “Nabanirman Kendras”, putting an end to the then 32-year-old insurgency. A much-delayed talks process finally concluded last week, resulting in the current tripartite memorandum of settlement, enabling the faction’s cadres to agree to surrender arms and vacate their camps. The “commander-in-chief” of the outfit, Paresh Baruah, had opposed the dialogue process in 2009, insisting that the “sovereignty issue” be a part of it, and since then his faction, the ULFA (Independent) has remained hostile to the peace process. The ULFA(I) is now a much weakened outfit, with Baruah believed to be in north-east Myanmar. The ULFA has long lost its potency as an insurgent force from its heydays in the 1990s, when it managed to farm the discontent that persisted in rural Assam even after the Assam Accord of 1985. Since then, the organisation has lost popular support, especially among sections of Assam’s peasantry, due to its violent tactics targeting civilians such as migrant workers and the poor, relying on extortion, besides espousing a flawed chauvinist ideology that misconstrued the nature of the Indian state, which yielded diminishing returns.

Military operations by Bhutan in the early 2000s broke its insurgent might and, later, the Sheikh Hasina-led Awami League government in Bangladesh handed over most of the outfit’s leaders. Since then, the pro-talks faction gave up the demand for sovereignty and revised its charter of demands to accommodate the interests of the “indigenous people” of Assam, while seeking an honourable exit. The delay in the conclusion of talks meant that some cadres had left the camps over the years, with a few joining the ULFA(I), but reports indicate that recruits to the Baruah-led organisation have fallen drastically in recent years. The threat of militancy from the remnants of the ULFA might have subsided dramatically over the years in Assam, but much needs to be done to raise the livelihood standards of the peasantry in the north-eastern State. Persistent poverty has been a key reason for mobilisation on a narrow ethnic basis, a radical version of which has been espoused by organisations such as ULFA.

## शांति की राह

### संपादकीय



यह एक जगजाहिर तथ्य है कि असम में अलगाववादी समूहों की गतिविधियों की वजह से पूर्वोत्तर के राज्यों में हालात कितने जटिल रहे हैं। इसे सुलझाने के लिए लंबे समय से कई स्तर पर कोशिशें चलती रही हैं, लेकिन शुक्रवार को इस दिशा में बड़ी कामयाबी मिली। दरअसल, असम में सक्रिय यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट यानी उल्फा के एक गुट के साथ केंद्र और असम सरकार के बीच दिल्ली में हुई बैठक में एक त्रिपक्षीय शांति

समझौता हुआ। यह पहल इसलिए बेहद महत्वपूर्ण है कि पिछले चार दशक में पहली बार सशस्त्र उग्रवादी संगठन उल्फा के किसी समूह के साथ एक शांति समझौते के मसविदे पर हस्ताक्षर हुए हैं। इसके तहत अरबिंद राजखोवा के नेतृत्व वाले उल्फा के वार्ता समर्थक गुट ने हिंसा की राह छोड़ने, संगठन को भंग करने और लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शामिल होने पर सहमति व्यक्त की। गौरतलब है कि असम बीते कई दशक से उल्फा की हिंसक गतिविधियों से त्रस्त रहा है, जिसमें अब तक दस हजार से ज्यादा लोगों को जान गंवानी पड़ी। काफी जद्दोजहद के बाद अब आकार में आ सके इस त्रिपक्षीय समझौते से यह उम्मीद की जा रही है कि असम में दशकों पुराने उग्रवाद के दौर के अंत की राह खुल सकेगी।

दरअसल, असम में उल्फा के अलगाववाद की मांग की जड़ में जिस तरह के सवाल थे, उसकी जड़ें राज्य के विकास और उसमें स्थानीय तबकों की भागीदारी के मुद्दे अहम रहे हैं। मगर इन मुद्दों की जटिलता इससे समझी जा सकती है कि 1979 में उल्फा का गठन ही 'संप्रभु असम' की मांग को लेकर किया गया था। तब से यह संगठन विध्वंसक गतिविधियों में शामिल रहा। यों उल्फा का जो गुट ताजा समझौते में शामिल हुआ है, उसने 2011 से ही हथियार नहीं उठाए हैं और पहले ही हिंसा छोड़ दी थी। जाहिर है, इस दौरान इस समूह को उग्रवाद और हिंसा के जरिए किसी समाधान या अपने मकसद तक पहुंचने की कोशिशों के बेमानी होने की वास्तविकता का आभास हुआ। वहीं सरकार के स्तर पर इस जटिल समस्या के हल की राह निकालने के क्रम में असम के विकास को लेकर अनेक कदम उठाए गए, मगर राज्य में अलग-अलग खेमों में काम कर रहे उग्रवादी गुटों के बीच असंतोष बना रहा। अब ताजा समझौते में इसी मुद्दे को केंद्र में रखते हुए केंद्रीय गृहमंत्री ने कहा है कि असम को एक बड़ा विकास पैकेज दिया जाएगा और मसविदे के प्रत्येक खंड को पूरी तरह लागू किया जाएगा।

असम में अलगाववादी गतिविधियों को खुराक राज्य की सांस्कृतिक पहचान और संसाधनों पर उनके हक के सवाल से मिल रही थी। दूसरी ओर, तथ्य यह भी है कि उल्फा के विद्रोह और उग्रवादी गतिविधियों की वजह से राज्य में विकास कार्य बाधित हुए थे। केंद्र सरकार के साथ समझौते में इससे संबंधित मुख्य बिंदुओं को भी संबोधित किया गया है। मसलन, राज्य के लोगों की सांस्कृतिक विरासत बरकरार रहेगी और लोगों के लिए बेहतर रोजगार के साधन मुहैया कराए जाएंगे। इसके अलावा, सशस्त्र आंदोलन की राह छोड़ने वाले उल्फा के सदस्यों को मुख्यधारा में लाने का भारत सरकार हर संभव प्रयास करेगी। हालांकि यह भी ध्यान रखने की जरूरत है कि असम में परेश बरुआ के नेतृत्व वाला उल्फा का

एक अन्य कट्टरपंथी समूह इस समझौते का हिस्सा नहीं है और उसने इस समझौते में शामिल होने से इनकार कर दिया। इसके बावजूद, यह एक अहम पक्ष है कि उल्फा के ही एक प्रभावशाली रहे समूह के साथ समझौते के बाद अगर शांति की स्थिति बनती है तो विकास की राह आसान होगी। स्थिरता और विश्वास में निरंतरता से लोगों में उम्मीद पैदा होगी और यही संभवतः शांति की चाबी भी साबित हो।



*Date:01-01-24*

## असम में शांति समझौता

### संपादकीय

यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ इंडिया (उल्फा) का दशकों पुराना संघर्ष बीते शुक्रवार को बाकायदा खत्म हो गया जब केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह और असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा की उपस्थिति में उल्फा (अरविंद राजखोवा गुट) के प्रतिनिधियों ने त्रिपक्षीय शांति समझौते पर हस्ताक्षर किए। उल्फा का गठन 'संप्रभु असम' की मांग को लेकर आरंभ हुआ था और इसने 1979 में आंदोलन शुरू किया था। असम से इस सबसे पुराने उग्रवादी संगठन के साथ शांति समझौते के फलस्वरूप उल्फा के सशस्त्र कैंडर हथियार डालकर देश की लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शामिल हो जाएंगे। हालांकि अभी भी परेश बरुआ के नेतृत्व वाला उल्फा का कट्टरपंथी गुट समझौते का हिस्सा नहीं है। माना जा रहा है कि बरुआ चीन-म्यांमार सीमा के पास किसी जगह पर रह रहा है, और चीन और म्यांमार से मदद के चलते तेवर ढीले करने को तैयार नहीं है। दरअसल, 2010 में उल्फा दो हिस्सों में बंट गया था। एक हिस्से का नेतृत्व राजखोवा कर रहे थे जबकि दूसरे हिस्से का नेतृत्व परेश बरुआ कर रहे हैं। उल्फा, केंद्र और राज्य सरकारों के बीच सस्पेंशन ऑफ ऑपरेशंस (एसओओ) समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद से राजखोवा गुट 2011 को शांति वार्ता में शामिल हुआ था। पूर्वोत्तर पर भाजपा सरकार ने केंद्र में सत्तारूढ़ होते ही खासी तवज्जो देना शुरू कर दिया था। पूर्वोत्तर के आदिवासीय क्षेत्रों में जातीय संगठनों के असंतोष से दशकों से केंद्र में आरूढ़ सरकार तनाव का सामना करती रही हैं। लेकिन भाजपा ने पहल करके बोडो, आदिवासी कार्बी और दीमासा उग्रवादी गुटों के साथ समझौते करके पूर्वोत्तर में उग्रवाद की तपिश को कम करने में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है। पिछले चार साल में पूर्वोत्तर में कुल नौ समझौते किए गए। राज्य के 85 प्रतिशत इलाकों से अफस्पा (आर्ल्ड फोर्सेज स्पेशल पावर एक्ट) हटा लेने के बाद से असम में माहौल शांत होता चला गया और अब शांति समझौते के आलोक में असम से पूरी तरह से अफस्पा हटा लिया जाएगा। गृह मंत्री ने असम के लिए एक बड़े पैकेज का भी ऐलान किया है। उल्फा का आंदोलन खासा उग्र रहा और उल्फा से संघर्ष में दस हजार से ज्यादा लोगों की जान गई और सुरक्षा बलों के अनेक जवानों की शहादत हुई। इस समझौते से इस क्षेत्र में स्थायी शांति की राह प्रशस्त हुई है।